इकाई 12 ज्योतिबा फुले

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.1.1 जीवन
12.1.2 लेखन कार्य
12.2 उपनिवेशवादी सरकार के प्रति दृष्टिकोण
12.2.1 अंग्रेजी राज की प्रशंसा
12.2.2 अंग्रेजी राज की आलोचना
12.3 भारतीय समाज-व्यवस्था की समीक्षा
12.3.1 समाज-व्यवस्था की समीक्षा के दार्शनिक आधार
12.3.2 वर्ण एवं जाति-व्यवस्था पर प्रहार
12.3.3 महिला-पुरुष समानता
12.4 भारतीय अर्थतंत्र की समस्याएं
12.4.1 कृषि क्षेत्र का संकट
12.4.2 कृषि-समस्या का समाधान
12.5 सार्वभौम धर्म
12.6 सारांश
12.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आधुनिक भारत में राजनीतिक चिंतन के विकास में ज्योतिबा फुले के योगदान की चर्चा की जायेगी। इस इकाई के अध्ययन से आप ज्योतिबा फुले के विचारों की प्रकृति और उनके विकास क्रम का विश्लेषण कर सकेंगे। उपनिवेशवाद के प्रति ज्योतिबा फुले और अब तक जिन चिंतकों का अध्ययन आपने किया है, उनकी प्रतिक्रियाओं के बीच अंतर भी जान सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

12.1.1 जीवन

फुले का जन्म पूना के एक माली परिवार में 1827 में हुआ था। माली शुद्र वर्ण के अंतर्गत आते थे और उनका स्थान महाराष्ट्र की किसान जाति के ठीक नीचे था। उनकी आरंभिक शिक्षा एक मराठी स्कूल में हुई और फिर तीन साल के व्यवधान के बाद उन्होंने पूना के मिशन स्कूल में शिक्षा प्राप्त की। 1848 में फुले ने निचली जाति के बच्चों की शिक्षा को समर्पित एक समाजसुधारक की हैसियत से काम शुरू किया। निचली और अछूत जाति की बालिकाओं के लिए उन्होंने एक स्कूल भी चलाया। चूंकि उस समय कोई शिक्षिका सुलभ नहीं थी, उन्होंने अपनी पत्नी सावित्री बाई से इस स्कूल में पढ़ाने का आग्रह किया। 1851 में उन्होंने बालिकाओं के लिए दो और स्कूल खोले। उनके बालिका-शिक्षा संबंधी कार्यों के लिए शिक्षा बोर्ड ने 1852 में उन्हें सम्मानित किया। 1852 में ही उन्होंने अछूतों के लिए एक स्कूल और एक रात्रि पाठशाला की स्थापना की। 1858 तक उन्होंने इन स्कूलों के प्रबंध कार्य से स्वयं को क्रमशः अलग कर लिया और समाज सुधार संबंधी व्यापक क्षेत्रों में प्रवेश किया। 1860 में उन्होंने विधवा विवाह पुनर्विवाह अभियान को समर्थन दिया और बाल मृत्यु रोकने के एक आश्रम की स्थापना की। फुले और उनकी पत्नी ने स्वयं इस आश्रम के एक अनाथ बच्चे को अपनाया, क्योंकि उनके कोई संतान न थी। 1865 में उन्होंने एक मित्र पादवल (Padval) द्वारा जाति-व्यवस्था पर लिखी पुस्तक का प्रकाशन किया।

संगठन, जिससे फुले का नाम जुड़ा है और जिसके लिए वे आज भी याद किये जाते हैं, वह था सत्य शोधक समाज। इसकी स्थापना उन्होंने अपने सहकर्मियों के साथ 1873 में की थी, वर्ण

एवं जाति-व्यवस्था पर आधारित हिंदू समाज व्यवस्था के विरुद्ध निचली जातियों को संगठित करने के लिए। उनके एक सहकर्मी ने 1877 में उपरोक्त आंदोलन के पहले समाचार-पत्र 'दीनबंधु' की शुरुआत की। सरकार ने 1876 में फुले को पूना नगरपालिका का सदस्य नियुक्त किया। 1882 तक वे इस पद पर रहे और दलित-हितों के लिए उन्होंने संघर्ष किया।

12.1.2 लेखन-कार्य

निचली जाति के आंदोलनों के नेता और संगठनकर्त्ता होने के अलावा फुले एक मौलिक चिंतक भी थे। इसलिए उन्होंने न केवल वितंडामूलक (polemical) लेख लिखना आवश्यक समझा बल्कि, अपने आधारभूत दार्शनिक रुझानों को सामने रखना भी जरूरी पाया। **ब्राह्मणाचे कसब (1869)** में उन्होंने ब्राह्मण पुरोहितों के शोषण को उजागर किया है। **गुलामगीरी (1873)** में उन्होंने निचली जातियों की दासता का ऐतिहासिक सर्वेक्षण सामने रखा है। 1833 में उन्होंने शेटकारयानचा सूद नाम से अपने भाषणों का संग्रह प्रकाशित किया जिनमें उस समय हो रहे किसानों के शोषण का विश्लेषण किया गया है। उनके दार्शनिक विचारों को व्यक्त करने वाले लेख हम सार्वजनिक सत्यकर्म पुस्तक में पाते हैं जिसका प्रकाशन 1891 में उनकी मृत्यु के एक साल बाद हुआ था। उनकी रचनाओं से हमें पता चलता है कि सामाजिक एवं राजनीतिक प्रश्नों पर उनके विचार ईसाई धर्म और टॉमस पेन के विचारों से प्रभावित थे। पेन की कृतियों ने अमेरिका तथा फ्रांस के राज क्रांतियों को प्रभावित किया था और अपने धर्मसम्मत उग्रवाद के लिए इंग्लैंड में विख्यात थीं। फुले ने अपने ऊपर पेन के विचारों का प्रभाव स्वयं स्वीकार किया है।

निचली जातियों के हित में उनके व्यापक कार्यों को मान्यता देते हुए 1888 में बंबई वासियों ने उनका अभिनंदन किया और उन्हें "महात्मा" की उपाधि दी।

इस इकाई के अंतर्गत हमारी रुचि मुख्यत: उनके सामाजिक एवं राजनीतिक विचारों का सार संक्षेप तथा विश्लेषण देने में होगी। राष्ट्रीय आंदोलन एवं चिंताधारा पर शोध कार्य करने वाले विद्वानों ने फुले जैसे चिंतकों के विचारों की उपेक्षा की है। जहा तक फुले की बात है, उनके संबंध में शोधकर्त्ताओं के सामने प्रमुख कठिनाई भाषा की होती है। उन्होंने मुख्यत: मराठी भाषा में और वह भी जन समुदाय में प्रचलित भाषा में लेखन कार्य किया।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : 1) अपने उत्तर के लिय नीचे दिये गये रिक्त स्थान का प्रयोग करें।
2) अपने उत्तर की जांच इकाई के अंत में दिये उत्तर से करें।

1) ज्योतिबा फुले की कुछ कृतियों की संक्षेप में चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

12.2 उपनिवेशवादी सरकार के प्रति दृष्टिकोण

12.2.1 अंग्रेजी राज की प्रशंसा

अंग्रेजी राज ने महाराष्ट्र में अंतिम पेशवा के आतंककारी एवं अराजकता शासन का खात्मा कर दिया। औपनिवेशिक शासकों ने न केवल विधि एवं व्यवस्था की स्थापना की, बल्कि विधि-सम्मत समानता की भी प्रतिष्ठा की। ब्राह्मण पेशवाओं के शासन ने निचली जातियों, विशेषकर महिलाओं की शिक्षा, नौकरियों एवं जीवन स्तर पर कड़ी सीमाएं आरोपित कर दी थीं। नये शासकों ने सभी जातियों के लिए शिक्षा और विभिन्न नौकरियों के अवसर खोल दिए। मिशनरी स्कूल तथा सरकारी कॉलेज जातीय मूल संबंधी विभेद किए बिना किसी भी छात्र को प्रवेश देने के लिए तैयार थे। समता और स्वतंत्रता संबंधी नये विचार निचली जातियों के अपेक्षा शिक्षित तबकों तक पहुंचने लगे। फुले स्वयं ही इस प्रक्रिया के संभवत:

श्रेष्ठतम परिणाम थे। उच्च जातीय सुधारकों एवं नेताओं ने भी औपनिवेशिक शासन का स्वागत किया था। यह आश्चर्य की बात नहीं कि निचली जातियों की दास स्थिति से चिंतित फुले ने भी अंग्रेजी शासन का पक्ष-पोषण किया। उनको आशा थी कि व्यक्तियों के बीच समानता में आस्था रखने वाली नई सरकार ब्राह्मणों के आधिपत्य से निचली जातियों को मुक्त करेगी।

अंग्रेजी राज ने प्रशासनिक क्षेत्र में नियुक्ति के नये अवसर प्रदान किये। स्थानीय स्तरों पर भी भारतीयों को राजनीतिक अधिकार दिए जा रहे थे। फुले स्वयं नगरपालिका के सदस्य के रूप में काम कर चुके थे। इसलिए वे यह बोध कर सकते थे कि अंग्रेजी शासन के अंतर्गत निचली जातियां किस प्रकार स्थानीय स्तरों पर सत्ता अर्जित कर सकती थीं और औपनिवेशिक नौकरशाही में पैठ कर सकती थीं। निचली जातियों के प्रति अंग्रेज शासकों के सद्भाव में उनका विश्वास था और इसीलिए उनसे कई प्रकार की अपेक्षाएं उन्होंने की। अंग्रेजी शासन कब तक चलेगा, इस बारे में वे आश्वस्त नहीं थे। इसलिए वे चाहते थे कि निचली जातियां उपलब्ध अवसर का लाभ उठाकर ब्राह्मणों के आतंक से मुक्त हो जाएं। ब्राह्मण शासक निर्धन निचली जातियों पर लगाए गये करों से बेतहाशा धन एकत्र करते थे लेकिन इनके कल्याण के लिए एक पैसा भी नहीं खर्च करते थे। इसके विपरीत, नया शासन प्रवंचित जन समुदाय के लिए अनेक अच्छी चीजें करने को तत्पर दिख रहा था। फुले ने औपनिवेशिक शासकों को आश्वस्त किया कि वे यदि शूद्रों को सुखी और संतुष्ट कर सकें तो शूद्रों की राज भक्ति के बारे में उनको चिंता नहीं करनी पड़ेगी। उन्होंने ब्रिटिश सरकार से मांग की कि ब्राह्मण कुलकर्णी पद खत्म करके योग्यता के आधार पर ग्राम प्रधान (पाटील) पद दिया जाय। दरअसल, फुले ब्रिटिश सरकार से यह चाहते थे कि गांवों में जाति-आधारित उद्यमों से जुड़ी बैल्यूटडुरी (balutedary) व्यवस्था को खत्म कर दिया जाए। उन्होंने सरकार से महिलाओं और अछूतों को निम्न स्तर देने वाली प्रथाओं-व्यवहारों पर पाबंदी लगाने वाले कानून बनाने की मांग की। फुले चाहते थे कि ब्राह्मण नौकरशाही के स्थान पर एक गैर-ब्राह्मण नौकरशाही को प्रतिष्ठित किया जाय। लेकिन इन पदों के लिए गैर-ब्राह्मण न मिलने पर, उनके विचार से, सरकार को अंग्रेज नागरिकों की ही नियुक्ति करनी चाहिए। उनका विश्वास था कि ब्रिटिश अधिकारी तटस्थ दृष्टिकोण अपनाएंगे और निचली जातियों का ही पक्ष लेंगे।

फुले को यह समुचित बोध था कि शिक्षा की प्रक्रिया अभी निचली जातियों तक नहीं पहुंची थी। जन समुदाय अभी राजनीतिक रूप से सचेत नहीं बना था। उच्च जातियों के अभिजन जनता के सच्चे प्रतिनिधि होने का दावा कर रहे थे और इस प्रकार अपने लिए राजनीतिक अधिकारों की मांग कर रहे थे। फुले के विचार से, यह प्रक्रिया उच्च जातियों के राजनीतिक वर्चस्व की ही पुनर्प्रतिष्ठा करने वाली थी। फुले ने अपने निम्न जातीय अनुगामियों को राजनीतिक अधिकारों के लिए आंदोलन में भाग लेने की सलाह दी। उनके तर्क के अनुसार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अथवा अन्य राजनीतिक संगठन सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय नहीं थे क्योंकि उनमें उच्च जातियों के ही प्रतिनिधि प्रभावी थे। इन संगठनों की रचना में ब्राह्मणों के स्वार्थपूर्ण एवं क्षुद्र इरादों के प्रति फुले ने अपने अनुगामियों को सचेत किया और उपरोक्त संगठनों से अलग रहने की सलाह दी। उनके सत्य शोधक समाज में नियमतः राजनीतिक चर्चा पर पाबंदी थी। दरअसल, हम पाते हैं कि उन्होंने अनेक अवसरों पर नई सरकार के प्रति अपनी पूर्ण निष्ठा का परिचय दिया। उनका दृढ़ विश्वास था कि सर्वशक्तिमान ईश्वर ने आतंककारी शासकों को अपदस्थ करके उनके स्थान पर एक न्यायसंगत, प्रबुद्ध एवं शांतिप्रिय ब्रिटिश शासन की स्थापना जन कल्याण के लिए की है। इसका आशय यह नहीं कि फुले को राजनीति के महत्व का बोध नहीं था। दअरसल, एक स्थान पर उन्होंने कहा है कि निचली जातियों की दशा में गिरावट राजनीतिक अधिकारों से उनके वंचित होने के कारण आई है। सत्य शोधक समाज के झंडे तले निचली जातियों को संगठित करने में उनके प्रयासों को राजनीतिक गतिविधि के रूप में ही देखा जाना चाहिए। यह सच जरूर है कि 19वीं सदी के संदर्भ में उन्होंने राजनीतिक सुधारों की अपेक्षा सामाजिक सुधारों की वरीयता दी, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं हो सकता कि वे बदली हुई परिस्थितियों में भी वही विचार रखते। वे अच्छी तरह जानते थे कि शिक्षा के साथ निचली जातियां अपने राजनीतिक अधिकारों की चेतना भी प्राप्त करेंगी और न केवल राजनीतिक सत्ता में अपने हिस्से की मांग, बल्कि ब्राह्मणों को अपदस्थ करके अपने वर्चस्व की स्थापना भी करेंगी। उनका समूचा लेखन-कार्य इसी दिशा में संचालित था।

12.2.2 अंग्रेजी राज की आलोचना

ब्राह्मण वर्चस्व की तुलना में अंग्रेजी राज को वरीयता देते हुए फुले उसकी खामियों से पूर्ण परिचित थे और उनकी ओर संकेत करने से कभी हिचके नहीं। चूंकि उनका उद्देश्य था ऐसे समता मूलक समाज की स्थापना जिसमें सभी स्त्री-पुरुष स्वतंत्रता का अनुभव करें, उन्होंने समकालीन शासकों की आलोचना की जब कभी भी उनकी नीतियों को उपरोक्त उद्देश्य के विरुद्ध पाया। उनका मुख्य सरोकार था, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में ब्राह्मण वर्चस्व को हमेशा-हमेशा के लिए खत्म कर देना। इसलिए अंग्रेजी सरकार की नीतियां परोक्षतः भी ब्राह्मणों के पक्ष में होने पर उन्होंने उन पर प्रहार किया।

अंग्रेजी सरकार की शिक्षा नीति पर फुले ने घनघोर प्रहार किया। उन्होंने इस बात की आलोचना की कि सरकार उच्च शिक्षा के लिए अधिकाधिक धन एवं सुविधाएं प्रदान कर रही थी लेकिन जन शिक्षा की उपेक्षा। उन्होंने सरकार को ध्यान दिलाया कि राजस्व का अधिकांश भाग जन समुदाय के श्रम में आता है। उच्च एवं धनिक वर्गों का राजकोष में योगदान नगण्य ही होता है। इसलिए सरकार को अपनी आय का बड़ा हिस्सा उच्च वर्गों के बजाय जन समुदाय की शिक्षा पर खर्च करना चाहिए।

शिक्षा नीति उच्च वर्गों के अनकूल होने के कारण ऊंचे पदों पर उनका एकाधिकार सा बना हुआ था। यदि सरकार सचमुच निचली जातियों का हित चाहती थी, तो प्रशासन में उच्च जातियों की संख्या कम करके निचली जातियों की संख्या बढ़ाना उसका कर्त्तव्य बनता था। दास प्रथा पर एक पुस्तक लिखने का उनका उद्देश्य यही था, सरकार की उच्च शिक्षा की दुर्व्यवस्था के प्रति सचेत करना। फुले के अनुसार यह व्यवस्था जन समुदायों को अज्ञान एवं निर्धनता की स्थिति में रखे हुए थी। शिक्षा कार्यों के लिए सरकार विशेष कोष जुटाती थी, लेकिन उसे जन समुदाय की शिक्षा के लिए खर्च नहीं किया जाता था। उन्होंने सरकार द्वारा चलाये जा रहे प्राथमिक विद्यालयों की आलोचना यह बताते हुए की कि उनमें दी जा रही शिक्षा संतोषजनक नहीं थी। वह छात्रों के भावी लक्ष्यों की दृष्टि से व्यवहारिक एवं उपयोगी नहीं सिद्ध होती थी। इसी प्रकार उन्होंने उच्च माध्यमिक विद्यालयों, कालेजों तथा छात्रवृत्ति योजनाओं की भी आलोचना की। उनके विचार से, छात्रवृत्ति योजनाएं अनुचित रूप से साहित्यिक श्रेणियों के पक्ष में होती थीं, जबकि आवश्यकता थी निचली जातियों के बच्चों को प्रोत्साहन देने की।

राष्ट्रवादियों ने उन उदारवादी सिद्धांतों को हमेशा सम्मान दिया था जिन पर अंग्रेजी शासन आधारित था। उन सिद्धांतों से विचलन के लिए फुले ने औपनिवेशिक नौकरशाही की आलोचना की। इस बिंदु पर फुले भी उनसे सहमत थे। बहरहाल, उन्होंने अंग्रेज तथा ब्राह्मण अधिकारियों के बीच अंतर करते हुए पहले को वरीयता दी। लेकिन उन्होंने यह बात भी सामने रखी कि अंग्रेज अधिकारी अपनी सुविधाओं के लिए ही अधिक चिंतित थे। किसानों की वास्तविक स्थिति जानने के लिए उनके पास समय ही नहीं होता था और न तो उनको किसानों की भाषा की जानकारी थी। इस प्रकार ब्राह्मण अधिकारी अंग्रेज अधिकारियों को भरमाने तथा निर्धन-निरक्षर किसानों के शोषण का अवसर प्राप्त कर लेते थे। फुले शायद इस तथ्य को परिलक्षित नहीं कर पाये कि अपना प्रभुत्व बनाये रखने के लिए औपनिवेशिक शासन हमेशा उपनिवेशों के अभिजनों पर निर्भर करता था, और इसलिए उन्हें नौकरशाहियों में समुचित स्थान देता था।

फुले के जीवनी लेखक इस बात का उल्लेख करते हैं कि पूना नगरपालिका के सदस्य के रूप में उन्होंने वायसराय के भारत आगमन के समय होने वाले अनावश्यक खर्चों का विरोध करके अपूर्व साहस का परिचय दिया था। 1888 में ड्यूक ऑफ कनॉट के सम्मान में पूना में एक प्रीतिभोज का आयोजन किया गया था। फुले एक निर्धन किसान की वेशभूषा में वहां गये और भोज के बाद एक प्रभावशाली भाषण दिया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि देश की वास्तविक जनता गांवों में बसती है। वे जानबूझकर इस वेशभूषा में आये थे ताकि अंग्रेज अतिथि साधारण किसानों की जीवन विधि से परिचित हो सकें। उन्होंने यह भी कहा कि इन किसानों के हित में नीतियों का निर्धारण सरकार का कर्त्तव्य है। उनके लेखों में भी हम सरकार की उन नीतियों की आलोचना पाते हैं जो किसानों के हितों के विरुद्ध होती थीं। आर्थिक समस्याओं पर उनके विचारों की चर्चा करते समय हम इनका उल्लेख करेंगे।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी : 1) अपने उत्तर के लिय नीचे दिये गये रिक्त स्थान का प्रयोग करें।
2) अपने उत्तर की जांच इकाई के अंत में दिये उत्तर से करें।

1) आरंभ में फुले ने अंग्रेजी शासन की प्रशंसा क्यों की? उनकी परवर्त्ती आलोचना का स्वरूप क्या था?

.....

.....

.....

.....

12.3 भारतीय समाज-व्यवस्था की समीक्षा

12.3.1 समाज-व्यवस्था की समीक्षा के दार्शनिक आधार

यदि फुले अंग्रेजी सरकार के आलोचक बने तो, इसके मूल में समकालीन समाज के अंतर्गत निचली जातियों के हित साधन एवं पद प्रतिष्ठा के लिए उनका सरोकार ही था। उनके अनुसार भारतीय समाज-व्यवस्था शक्तियों के बीच असमानता और कुटिल ब्राह्मणों द्वारा अबोध जन समुदाय के शोषण पर आधारित थी। फुले का विश्वास था कि विश्व के रचयिता ईश्वर ने सभी स्त्री-पुरुषों को अपने अधिकारों के उपभोग के लिए स्वतंत्र और सक्षम बनाया है। विधाता ने सभी स्त्री-पुरुषों को मानवधिकारों के संरक्षण का दायित्व दिया है ताकि वे किसी अन्य व्यक्ति का दमन न करें। सृष्टिकर्त्ता ने सभी स्त्री-पुरुषों को धार्मिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता दी है। इसलिए किसी को भी अन्य व्यक्तियों की धार्मिक आस्थाओं और राजनीतिक विचारों को हेय दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। फुले के विचार से, सृष्टिकर्त्ता ने सभी मनुष्यों को विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी है। लेकिन उनके द्वारा व्यक्त विचार अथवा मंत किसी अन्य व्यक्ति के लिए अहितकर नहीं होना चाहिए। विधाता ने सभी स्त्री-पुरुषों को अपने सामर्थ्य के अनुसार नागरिक सेवाओं अथवा नगरपालिका प्रशासन कार्यों में अपने पद का दावा करने योग्य बनाया है। किसी को भी अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। फुले का विश्वास था कि सभी स्त्री-पुरुष सृष्टिकर्त्ता द्वारा बनाई गई सभी चीजों के उपभोग के पात्र हैं। सभी स्त्री-पुरुष विधि-विधान की दृष्टि से समान हैं। फुले चाहते थे कि मिनिस्टर और जज (न्यायाधीश) अपने निर्णयों में निष्पक्षता का परिचय दें। उपरोक्त आधारभूत सिद्धांतों के प्रकाशन में ही फुले ने भारतीय समाज-संबंधी अपनी समीक्षा का विकास किया।

12.3.2 वर्ण एवं जाति-व्यवस्था पर प्रहार

भारतीय समाज वर्ण-व्यवस्था पर आधारित था। फुले ने इसके दैवी निर्धारण के विचार को चुनौती दी। उनके विचार से, निचले वर्णों को छलने के लिए ही ऐसा दावा किया जाता था। चूंकि वे दावे हिंदुओं के धार्मिक ग्रंथों के आधार पर किए जाते थे, उन्होंने इन ग्रंथों के खोखलेपन पर पर्दाफाश करने का फैसला किया।

इन ग्रंथों की व्याख्याओं के लिए फुले समकालीन सिद्धांतों और अपनी रचनात्मकता पर निर्भर करते थे। इस प्रकार ही उनका यह विश्वास बना था कि आर्य रूप में जाने वाले ब्राह्मण कुछ हजार वर्षों पहले संभवतः ईरान से उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में आये थे। युद्ध विजेताओं/आक्रमणकारियों के रूप में आकर उन्होंने इस क्षेत्र के मूल निवासियों को पराजित किया। ब्रह्मा और परशुराम जैसे नेताओं के संचालन में ब्राह्मणों ने मूल निवासियों के विरुद्ध दीर्घकालिक संघर्ष चलाये थे। आरंभ में वे गंगा के तटवर्ती क्षेत्रों में बसे और बाद में देश के अन्य भागों में फैले गये। जन समुदाय पर पूर्ण नियंत्रण रखने के लिए उन्होंने वर्ण जाति संबंधी मिथक गढ़े तथा अमानवीय-निर्मम नियमों की रचना की। पुरोहित-व्यवस्था की प्रतिष्ठा करके उन्होंने सभी कर्मकांडों में ब्राह्मणों को प्रमुख स्थान दे दिया। ब्राह्मणों को ही सर्वोच्च अधिकार एवं सुविधाएं दी गई थीं। शुद्रों व अतिशुद्रों (अछूतों) को घृणा का पात्र माना गया था, न्यूनतम मानवीय अधिकार भी उनको प्राप्त नहीं थे। उनके स्पर्श अथवा उनकी काया को भी दूषित माना गया था। फुले ने हिंदुओं के धार्मिक ग्रंथों की पुनर्व्याख्या करके दिखाया कि मूल निवासियों को आर्यों ने पराधीन कैसे बनाया। विष्णु के नौ अवतारों को उन्होंने आर्यों के विजय अभियान की विभिन्न मंजिलों के रूप में देखा था। उस काल से ही

ब्राह्मण शूद्रों व अति शूद्रों को दास बनाए हुए हैं जो पीढ़ियों से गुलामी की जंजीरें ढोते आ रहे हैं। मनु सरीखे अनेक ब्राह्मण रचनाकारों ने समय-समय पर जनमानस को बंदी बनाए रखने वाली श्रुति कथाओं में योगदान किया है।

फुले ने ब्राह्मणों द्वारा स्थापित दासता की तुलना अमेरिका की दास प्रथा से की है और दिखाया है कि शूद्रों को अमेरिकी हस्तियों की तुलना में बहुत अधिक यातनाएं झेलनी पड़ी हैं। उनके विचार से, स्वार्थगत अंधविश्वास एवं कट्टरता पर आधारित यह व्यवस्था ही भारतीय समाज में बाह्य जड़ता और युगों पुराने दुराचार के लिए जिम्मेदार है।

अतीत में ब्राह्मण वर्चस्व का विवरण देने के बाद फुले यह बताते हैं कि उनके काल में भी चीजें बदली नहीं हैं, सिवाय इसके कि अंग्रेजों का एक अधिक प्रबुद्ध शासन स्थापित हुआ है। ब्राह्मण शूद्रों का शोषण उनके जन्म काल से मृत्यु तक करते रहे थे। धर्म की आड़ लेकर ब्राह्मणों ने शूद्रों के प्रत्येक क्रियाकलाप में हस्तक्षेप किया। ब्राह्मण एक पुरोहित के रूप में ही शूद्रों का शोषण नहीं करते थे, बल्कि अन्य रूपों में भी। अपनी उच्च शिक्षा प्राप्त स्तर के कारण प्रशासन, न्यायपालिका, सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक संगठनों के पदों पर उनका एकाधिकार सा था। शहर हो या गांव, ब्राह्मण ही सर्वेसर्वा होता था। यही स्वामी और शासक होता था। गांव के पटेल की कोई हस्ती नहीं रह गई थी। बल्कि कुलकर्णी कहे जाने वाले गांव के ब्राह्मण लेखाकार ने ही समूची सत्ता हथिया ली थी। वही लोगों का इहलौकिक-आध्यात्मिक सलाहकार, महाजन और सभी मामलों में न्यायकर्ता माना जाता था। तहसील स्तर भी यही स्थितियां थीं। तहसीलदार अशिक्षित जन समुदाय को प्रताड़ित करता रहता था। फुले के अनुसार, यह विवरण प्रशासन के सब स्तरों, न्याय समितियों और सरकार के विभिन्न विभागों के लिए सच था। अंग्रेज उच्चाधिकारियों को गुमराह करते हुए ब्राह्मण नौकरशाह निर्धन-निरक्षर जन समुदाय का प्रत्येक स्थिति में शोषण करते थे।

यहां पर यह ध्यान देना जरूरी है कि माली-शूद्र-जाति से संबंधित फुले शूद्रों के लिए ही नहीं, बल्कि अतिशूद्रों, अछूतो के लिए भी चिंतित थे। इसीलिए उन्होंने ब्राह्मण वर्चस्व के विरुद्ध निचली जातियों और अछूतों के संगठन और समता मूलक समाज के लिए उनके प्रयास का पक्ष पोषण किया। यह आश्चर्य की बात नहीं कि डॉ. अंबेडकर, जिनके विचारों का अध्ययन आप आगे करेंगे, फुले को अपना गुरु मानते थे।

12.3.3 महिला-पुरुष समानता

भारतीय समाज का एक अन्य उत्पीड़ित समूह था, महिलाओं का। फुले हमेशा पुरुषों के समांतर महिलाओं का उल्लेख करते हैं। वे यह मानकर नहीं चलते थे कि पुरुषों के उल्लेख से महिलाओं का भी स्वतः बोध हो जाता है। मानवधिकारों की चर्चा करते समय वे हमेशा महिलाओं का विशेष संदर्भ रखते हैं। ब्राह्मणों ने जिस प्रकार शूद्रों को अबोध बनाए रखकर अधिकारों से वंचित कर दिया था, उसी प्रकार, फुले के विचारों के अनुसार, स्वार्थी पुरुषों ने पुरुष-प्रभुत्व बनाए रखने के लिए महिलाओं की शिक्षा पर प्रतिबंध लगा दिया था। हिंदू धार्मिक ग्रंथों ने पुरुषों को अनेक छूटें दी थीं, लेकिन महिलाओं पर कड़े अंकुश लगाए थे। फुले की मुख्य चिंता उस समय की विवाह-व्यवस्था को लेकर थी। उन्होंने बाल-विवाह, युवती और वृद्ध व्यक्ति के विवाह, बहु विवाह जैसी प्रथाओं, महिला-पुनर्विवाह संबंधी आपत्तियों, वेश्यावृत्ति, विधवाओं के प्रताड़न इत्यादि पर कटु प्रहार किए। शूद्र किसानों को उन्होंने एक से अधिक बीबी न रखने और बाल-विवाह न करने की सलाह दी। विवाह संस्था पर उन्होंने गंभीर विचार किया था और सत्य शोधक समाज के सदस्यों के विवाह के लिए एक सरल, आधुनिक अनुबंध रीति चलाई थी। यह जानकारी दिलचस्प है कि विवाह, परिवार संबंध, शिक्षा एवं धर्म की दृष्टि से महिलाओं के लिए समान अधिकार मात्र से फुले संतुष्ट नहीं थे, बल्कि उन्होंने अनेक दृष्टियों से महिलाओं के श्रेष्ठतर स्तर का भी दावा किया।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी : 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये रिक्त स्थान का प्रयोग करें।
2) अपने उत्तर की जांच इकाई के अंत में दिये उत्तर के आधार पर करें।

1) वर्ण एवं जाति-व्यवस्था संबंधी फुले की समीक्षा की संक्षेप में चर्चा करें।

.....

.....

12.4 भारतीय अर्थतंत्र की समस्याएं

12.4.1 कृषि क्षेत्र का संकट

जातीय एवं सामाजिक समस्याओं के निरूपण में फुले का सरोकार भारतीय समाज में शूद्रों, अछूतों और महिलाओं की स्थिति से जुड़ता था। आर्थिक विचारों के प्रसंग में उनकी दिलचस्पी किसानों व उनकी समस्याओं में दिखती थी। उच्च जातियों से संबंधित राष्ट्रवादी नेता उद्योगीकरण को ही भारत की आर्थिक समस्याओं का समाधान मानते थे। लेकिन भारतीय अर्थतंत्र को मुख्यत: एक कृषि अर्थतंत्र मानने वाले फुले ने अपने विचार कृषि सुधारों के दृष्टिकोण से व्यक्त किये। भारतीय कृषि व्यवस्था एक संकट की स्थिति से गुजर रही है, इस तथ्य पर जोर देते हुए उन्होंने संकट के निम्नांकित कारकों को चिहिन्त किया था।

कृषि कर्म पर आश्रित आबादी की संख्या बढ़ गई थी। पूर्ववर्त्ती समय में किसी किसान-परिवार से कम से कम एक व्यक्ति भारत सरकार के सेना अथवा प्रशासन में नियुक्ति पाता था। छोटे भूमिखंडों के मालिक किसान अपनी आजीविका साधन निकटवर्ती वनों से फल-फूल, चारा, घास और लकड़ी इत्यादि के रूप में प्राप्त करते थे। नई सरकार ने सभी पहाड़ी क्षेत्र, घाटियां, बंजर भूमि और चारगाह अपने वन विभाग के अंतर्गत ले लिए और इस प्रकार उपरोक्त साधनों पर निर्भर किसानों का जीवन कठिन बना दिया।

किसानों की आय कम हो जाने के बावजूद, अंग्रेज अधिकारियों ने जमीन की लगान दर बढ़ा दी। गांव के महाजन तथा राजस्व एवं सिंचाई विभागों और अदालतों के ब्राह्मण अधिकारी किसानों के शोषण के लिए सदा तत्पर थे।

अत्यंत निर्धनता एवं भूमिखंडों की बिगड़ती दशा के कारण किसान ऋणग्रस्तता की स्थिति से निकल नहीं सकते थे। इन स्थितियों में महाजनों को भूमि का हस्तांतरण कर दिया जाता था। ग्रामीण अर्थतंत्र के सामने एक अन्य समस्या आई ब्रिटिश माल से अनुचित होड़ के रूप में। बड़ी मात्रा में इन सस्ते और बेहतर मालों के देश में आने से गांवों और कस्बों के स्थानीय दस्तकारों को भारी क्षति उठानी पड़ी और अनेक स्थितियों में उन्हें अपना खानदानी कारोबार बंद करना पड़ा। कुटीर उद्योगों में लगे लोगों को अपने काम से हाथ धोना पड़ा और ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारों का अनुपात और बढ़ गया।

12.4.2 कृषि-समस्या का समाधान

ग्रामीण अर्थतंत्र और कृषि क्षेत्र संबंधी अपने गहन ज्ञान के आधार पर फुले ने उपरोक्त समस्याओं के कुछ समाधान सुझाए। किसानों की निर्धनता की समस्या हल करने के लिए फुले ने जो पहला सुझाव दिया, वह था खेती के लिए पर्याप्त पानी सुलभ बनाने हेतु तालाबों और बांधों का निर्माण। उन्होंने सरकार से भूमि संरक्षण, पशु-प्रजनन, कृषि की आधुनिक विधियों की शिक्षा, वार्षिक कृषि प्रदर्शनियों इत्यादि जैसी योजनाएं चलाने की मांग की। उन्होंने इस बात को लक्षित किया कि कृषि को लाभकारी बनाए बिना कृषि बैंकों की स्थापना का उद्देश्य पूरा नहीं होगा। कृषि को लाभकारी बनाने के लिए उन्होंने सरकार से किसानों पर करों का बोझ कम करने की मांग की। भू-शुल्क तथा स्थानीय कोष में भुगतान करने के बाद साधारण किसान परिवार में प्रत्येक व्यक्ति के लिए औसतन तीन रुपया प्रतिमास बचता था, जबकि एक साधारण ब्राह्मण अथवा अंग्रेज अधिकारी को विभिन्न खर्चों के लिए पंद्रह रुपये प्रतिमास मिलता था।

फुले ने भारतीय समाज की अधिक समस्याओं के अनूठे बोध का परिचय दिया था। अंग्रेजी शासन के प्रति उनका प्रशंसात्मक दृष्टिकोण हम पहले देख चुके हैं। लेकिन वे यह भी समझ चुके थे कि भारतीय अर्थतंत्र, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र, औपनिवेशिक संबंधों के अधीन किस प्रकार तहस-नहस हो रहा था। उच्च जातियों के अभिजन राष्ट्रवादियों ने दिखाया था कि भारत से इंग्लैंड की ओर किस प्रकार संपदा की निकासी हो रही थी। किसानों और निचली जातियों के दृष्टिकोण से सोचने वाले फुले संपदा-निकासी का एक अन्य रूप भी देख सके : ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्रों की ओर, किसान अर्थव्यवस्था से ब्राह्मण-अधीन क्षेत्रों की ओर। यह लक्षित किया जाना चाहिए कि फुले ने किसानों के अंतर्गत कोई वर्ग-विभेद नहीं किया।

टिप्पणी : 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये रिक्त स्थान का प्रयोग करें।
2) अपने उत्तर की जांच इकाई के अंत में दिये उत्तर के आधार पर करें।

1) भारत की आर्थिक समस्याओं का कैसा समाधान ज्योतिबा फुले ने सुझाया?

.....

.....

.....

.....

12.5 सार्वभौम धर्म

निचली जातियों और अछूतों की मुक्ति का उद्देश्य न केवल भारतीय समाज व्यवस्था अथवा औपनिवेशिक आर्थिक नीति बल्कि हिंदू धर्म की समीक्षा की अपेक्षा करता था। किसी प्रकार के मुक्तिमूलक धर्म की अवधारणा का प्रयास भी इसके लिए आवश्यक था। टॉमस पेन के क्रांतिकारी विचारों से प्रभावित फुले उपरोक्त प्रकार के सैद्धांतिक प्रयास में समर्थ सिद्ध हुए थे।

फुले एकेश्वरवाद थे। ईश्वर को उन्होंने इस विश्व का रचयिता माना और सभी नर-नारियों को उसकी संतान। फुले ने मूर्ति पूजा, कर्मकांड, तपश्चर्या, भाग्यवाद तथा अवतारवाद का तिरस्कार किया। उन्होंने ईश्वर तथा उपासक के बीच कोई मध्यस्थता आवश्यक नहीं मानी। ईश्वर-निर्धारित किसी पुस्तक के अस्तित्व में उनका विश्वास नहीं था। ऐसा लग सकता है कि फुले का दृष्टिकोण एम.जी. रानाडे और उनके प्रार्थना समाज के विचारों जैसा ही था। लेकिन ऐसा नही है। रानाडे और उनके बीच व्यापक भिन्नता थी, अत्यंत महत्वपूर्ण विषयों पर। रानाडे हिंदू धर्म के ढांचे के अंतर्गत ही काम करना चाहते थे। वे हिंदू परंपराओं में गर्व करते थे और उनसे अलग होने की बात उन्होंने कभी नहीं सोची। सुधारवादी कार्यकर्त्ताओं को वे संत-विद्रोहों तथा इतिहास में हुए उन जैसे प्रयासों की ही निरंतरता में देखते थे। इसके विपरीत, फुले सत्य शोधक समाज को हिंदू धर्म के विकल्प के रूप में देखते थे। उनकी धारणाओं का सच्चा धर्म हिंदू परंपराओं से बिल्कुल अलग था। रानाडे जैसे सुधारकों से फुले की भिन्नता इस बात में भी सामने आई कि उन्होंने हिंदू धर्म के मिथकों तथा पवित्र ग्रंथों स्मृतियों और वेदों की आलोचनों की। उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि हिंदू धर्म का इतिहास वास्तव में ब्राह्मण वर्चस्व एवं शूद्र दासता का इतिहास है। तथाकथित पवित्र पोथियों में वे सच्ची धर्म चर्चा के बजाय कुटिलता, क्षुद्रता और छद्म ही देखते थे। अभिजात सुधारकों ने हिंदू धर्म के समकालीन पतित स्वरूप की ही आलोचना की, जबकि फुले ने उसके मूल पर ही प्रहार किया और स्पष्ट किया कि ब्राह्मणों ने समूचे इतिहास क्रम में निचली जातियों को छला है। फुले की व्याख्या के अनुसार हिंदू धर्म कुटिल ब्राह्मणों द्वारा निचली जातियों को छलने के लिए रची गई वर्ण एवं जाति-व्यवस्था पर आधारित धर्म था।

दरअसल, फुले ने प्रार्थना समाज और ब्राह्मण समाज पर कुटिल इरादों का आरोप लगाया। उनके अनुसार, ये समाज निचली जातियों से जमा किए गए राजस्व से शिक्षित बने ब्राह्मणों द्वारा स्थापित थे। इन संगठनों के क्रिया-कलापों का उद्देश्य था अपने राजनीति-प्रेरित पूर्वजों द्वारा धर्म के नाम पर बनाई गयी सामाजिक अधिरचना को छुपाना। इन संगठनों को ब्राह्मणों ने आत्म रक्षा के लिए और शूद्रों को छलने के लिए बनाया था।

लेकिन हिंदुत्व/हिंदू धर्म को पूरी तरह खारिज करते हुए भी फुले ने धर्म के विचार को ही नहीं ठुकरा दिया। इसके स्थान पर स्वतंत्रता एवं समानता के सिद्धांतों पर आधारित सार्वभौम धर्म की प्रतिष्ठा का प्रयास उन्होंने किया। उनका सत्य शोधक समाज किसी गुरु अथवा ग्रंथ की सहायता के बिना सत्य के संधान पर बल देता था। उनके धार्मिक विचार निश्चय ही ईसाई धर्म से प्रभावित थे लेकिन उन्होंने धर्मांतारण का समर्थन कभी नहीं किया क्योंकि उन पर पेन के उग्र धार्मिकतावादी तर्कों का भी प्रभाव था, जिसने ईसाई धर्म की अनेकानेक त्रुटियों को लक्षित किया था।

उनका सार्वभौम धर्म उदारतावादी और अनेक दृष्टियों से पारंपरिक धर्मों से भिन्न था। उनके धार्मिक सरोकार मुख्यतः प्राथमिक रूप से, सेक्यूलर विषयों से जुड़ते थे। फुले की परिकल्पना

में एक ऐसा परिवार था, जिसके प्रत्येक सदस्य अपने-अपने धर्म का अनुसरण कर सकेंगे। इस आदर्श परिवार के अंतर्गत पत्नी बौद्ध धर्म अपना सकती है, जबकि पति ईसाई हो सकता है और बच्चे अन्य धर्मों का अनुसरण कर सकेंगे। फुले का विश्वास था कि सभी धार्मिक रचनाओं और ग्रंथों में सत्य का अंश संभव है, इसलिए उनमें से कोई एक परम सत्य का दावा नहीं कर सकता। उनका विचार था कि सरकार को हिंदू धर्म की अमानुषिक प्रथाओं और अन्यायपूर्ण परंपराओं की ओर से आंख नहीं मूंद लेनी चाहिए। एक स्थान पर उन्होंने सरकार द्वारा मंदिरों को अनुदान जारी रखने की नीति की आलोचना की, क्योंकि यह धनराशि करों के रूप में निचली जातियों से ही उगाही जाती थी। इस प्रकार, जहां तक फुले की धार्मिक आस्थाओं की बात है, धर्म संबंधी मसलों पर उसमें किसी प्रकार की सांप्रदायिकता अथवा अनपेक्षित तटस्थता नहीं मिलती।

बोध प्रश्न 5

टिप्पणी : 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये रिक्त स्थान का प्रयोग करें।
2) अपने उत्तर की जांच इकाई के अंत में दिये उत्तर से करें।

1) अपनी धार्मिक आस्थाओं के मामले में फुले रानाडे और अन्य सुधारकों मे किस प्रकार भिन्न थे?

.....

.....

.....

.....

12.6 सारांश

19वीं सदी महाराष्ट्र में जन्मे एक निचली जाति से आये समाज सुधारक, ज्योतिबा फुले ने भारतीय समाज-व्यवस्था और हिंदू धर्म की एक सम्यक समीक्षा का विकास किया। उन्होंने पुष्ट किया कि शूद्रों और अति शूद्रों (अछूतों) की इस धरती पर आने के बाद ब्राह्मणों ने एक शोषणमूलक जाति-व्यवस्था की रचना की और अत्यंत भ्रांत मिशकों और धर्म ग्रंथों से इस व्यवस्था का पक्ष पोषण किया। प्रबुद्ध अंग्रेजी शासन ने ब्राह्मणों की इस दासता से स्वयं को मुक्ति के लिए जन समुदाय को अवसर दिया। फुले ने इसके साथ ही, उच्च शिक्षा को समर्थन देने तथा ब्राह्मणों, अधीनस्थ अधिकारियों पर ही निर्भरता के लिए ब्रिटिश नौकरशाही की आलोचना की। उन्होंने विदेशी शासन की आर्थिक नीतियों की भी आलोचना की, जो निर्धन किसानों के हितों के प्रतिकूल थीं। कृषि क्षेत्र की दशा सुधारने के लिए उन्होंने अनेक समाधान सुझाए।

शोषणमूलक समाज-व्यवस्था के स्थान पर फुले व्यक्तिगत स्वतंत्रता और समानता के सिद्धांतों पर आधारित समाज की स्थापना करना चाहते थे। हिंदू धर्म के स्थान पर एक सार्वभौम धर्म की प्रतिष्ठा ही उनका अभीष्ट था।

12.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

कीर, धनंजय : महात्मा ज्योति राओ फुले : *फादर ऑफ सोशल रिव्यौलूशन,* पॉपुलर प्रकाशन, बंबई।

ओ' हैनलोन, रोज़लिंड : *कास्ट कांफ्लिक्ट एंड आइडियौलोजी* : महात्मा ज्योति राओ फुले एंड लो कास्ट प्रोटेस्ट इन नाइनटींथ सैंचुरी वैस्टर्न इंडिया, ओरियंट लौंगमैन, बंबई

पथन, वाई.एम. *'महात्मा ज्योति राओ फुले एंड सत्य शोधक समाज'* एस.सी. मलिक (संपा) *डिस्सेंट प्रोटेस्ट एंड रिफौर्म इन इंडियन सिविलज़ेशन,* आइ.आइ.ए.एस., शिमला, 1977

ऑमवेट, गेल *'महात्मा ज्योति राओ फुले एंड द आइडियौलोजी ऑफ सोशल रिव्यौलूशन इन इंडिया'* 'इकनौमिक एंड पौलिटिकल वीकली' में, 6 (37), सितंबर, 1977